सिंधु समाज के तीज त्योहारों में संगीत

***डॉ. प्राची सुभाष हलगांवकर**

प्रस्तावना :

प्रत्येक धर्म, समाज, संप्रदाय व संस्कृति में जन्म से मृत्यु तक मनुष्य रीति–रिवाजों और तीज–त्योहारों के मध्य अपने मनोभावों को संगीत के माध्यम से व्यक्त करता चला आ रहा है। धर्मों के अनुरूप विभिन्न तीज–त्योहारों एवं रीति–रिवाजों में भिन्नताएं अवश्य है और कुछ भिन्नताएं तो समय परिवर्तनवश प्रत्यक्ष हैय पर तब भी उन परंपराओं में संगीत सदैव अमर है।

अति प्राचीन सिंधु–समाज की परंपराओं, मान्यताओं, रीति–रिवाजों व तीज–त्योहारों में भी समय के साथ अनेक परिवर्तन हुए हैं। प्रस्तुत लेख में, सिंधु–समाज में प्रचलित तीज–त्योहारों से संबंध गीत संगीत एवं नृत्य की चर्चा की गई है।

सिंध का नववर्ष 'चेटीचंड' :

'यदा–यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत अभ्युत्थानम अधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम।' तात्पर्य यह कि जब–जब भी धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि हुई, उसका अंत करने के लिए भगवान ने किसी न किसी मसीहा के रूप में जन्म लिया और लोगों को सत्य का मार्ग दिखाया। भगवान श्री झूलेलाल की जीवन कथा भी 'श्रीमद भगवतगीता' के श्लोक अनुरूप ही प्रतीत होती है।

भारतीय चौत्र मास प्राकृतिक तौर पर एक चेतनामय, चमत्कारिक व भक्तियुक्त पावन मास है। इसी दिन भगवान वरुण अवतार का धरती पर अवतरण हुआ, अतः उनके जन्मदिवस को नववर्ष के रूप में 'चेटीचंड' नाम से मनाया जाता है। सिंधु–समाज में चेटीचंड पर्व मनाने के पीछे यह धारणा रही है कि यह पर्व मनुष्य में उत्साह,उमंग व साहस जगाता हैय भक्तों में बुराइयों से निर्भीकता पूर्वक मुकाबला करने की शक्ति, दुश्मनों को माफ करने व सभी का हित करने की भावना जागृत करता है।

इस दिन वरुण देव के समक्ष ज्योति प्रज्वलित कर शोभायात्रा निकाली जाती है, जिसमें लोक कलाकार रंग–बिरंगी पारंपरिक पोशाकों में लोकगीतों, लोकनृत्यों ('छेज' आदि) की प्रस्तुतियां देते हैं– होजमालो –

जेको खटी आयो खैर सा..... होजमालो।

अर्थात– 'खुशियां मनाओ! आज वह आ गया है, जो अपने साथ सब की खैरियत (खुशियां व स्वास्थ्य) लाता है।

सिंधु समाज में सावन का महीना :

सिंधु–समाज में सावन का महीना अनेक तीज– त्योहारों का प्रारंभ माना गया है। इन तीज–त्योहारों से जुड़ी लोक–कथाएं, कहानियां एवं लोकगीत, साहित्य तथा संगीत में प्रसिद्ध है। तीज–त्योहारों का प्रारंभ वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की 'अक्षय तृतीया' (अखतीज) से होता है।

*****श्रीगणेष कला महाविद्यालय, शिवणी–कुंभारी ता.जि.अकोला

अबूझ मुहूर्त के रूप में इस पर्व पर अत्यधिक विवाह होते हैं। विवाह के अवसर पर गाया जाने वाला एक गीत (लादा गीत) इस प्रकार है–

दिख जे रात लाडे
दिख जे गत लाडे मुर्गियों घराई
सोवर अछरनि जढियों, रि सोवर हिरन मणयो
री लाडल लाई जूंगी कर कूले, की लाडल लाई लूंगी कर कुले
घड़ी त खणदई माऊ, मूड़ा न छेड़ीदई सेण संगरिअ वारी संसू, मुंहजान वारी साली
पलंग ते वेहदो पिए३
की लाडल लाई लूंगी कर कुले–२
मूमल माता न कर मारून सॉ – २
दईअणओ बारे हंदणओ बिछाए आई
रातों सम्हाले आई हर सॉ
मूमल माता न कर मारून सॉ

उक्त लादा गीत में शादी वाली रात अर्थात शादी के दिन होने वाली सभी रस्मों का वर्णन किया गया है।

मोहिंजा मोर लाडा३.
चढ़े घोट घोड़ीअ मुहिंजा मोर लाडा
सुहिंणी कुवारं आणींदे चितचोर लाडा
चड़े घोट३..
नाचु बि इंदा अच्छी छेज हणंदा
शहनाई ढोलक सब साज वजंदा
वजन्दा विधुर जा उहे बैंड बाजा
चढ़े घोट३.
जाजी बि इंदा सूर साठा पवंदा
मिट ऐं माइट घोरु घोरींदा
ठरें माई, ठरे पिए, बलिहार लाडा
चढ़े घोट३.

उक्त लादा–गीत में, खुशी व्यक्त करते हुए दूल्हे की प्रशंसा एवं रस्मों–रिवाजों का वर्णन किया गया है। गीत का भाव इस प्रकार है– 'सिर पर मोरपंख का सेहरा बांधे दूल्हा आज सोने–सी दुल्हन को लाएगा। इस विवाह के शुभ अवसर पर सभी गीत गाएंगे, नृत्य (पारंपरिक नृत्य 'छेज') करेंगे, सभी प्रकार के साज (शहनाई, ढोलक, बैंड आदि) बजेंगे, साठ (रस्मो–रिवाज) घोर (बलिहाइयॉ) होंगें और मां–बाप अत्यधिक प्रसन्न होते हुए अपने पुत्र को आशीष देंगे।

तत्पश्चात जेष्ठ का महीना आता है। इस माह में सिंधु–समाज की महिलाएं अपने भाइयों, भतीजे एवं पति की दीर्घायु के लिए जेष्ठ–पूजन करती है। जेष्ठ माह के उपरांत सबसे अधिक व्रतों का महीना 'सावन' आता है। सावन में वर्षा ऋतु होने के साथ ही समस्त धर्मों एवं जातियों की तरह सिंधु–समाज की भी तीज–त्योहार मनाए जाते हैं। इस सुहावने मौसम की बूंदा–बांदी के साथ ही पहले सोमवार की महिलाएं अपने पारिवारिक पंडित (गुरु महाराज) के पास जाकर धागा बॅधवाती है, जिसे 'महादेव का

धागा' कहा जाता है। और जिसका विशेष आध्यात्मिक महत्व एवं मान्यता है। इसके बाद नागपंचमी (गोगडो), बासौडा (शीतला पूजन) बुढा बासौडा (बंदी थदड़ी), जन्माष्टमी, ग्यारस एकादशी, बारस, राखी, तीज आदि व्रतों–पर्वो आदि को भी सामूहिक पारंपारिक पूजन एवं गीतों के साथ पूर्ण किया जाता है। इन तीज–त्योहारों से संबंध देवी–देवताओं के अनेक गीत प्रसिद्ध है।

सिंधु समाज में राखी :

प्राचीन परंपराओं के अनुकूल, बहिनों से कच्चे धागों से बनी राखी बंधवा ना उनकी जीवन–भर रक्षा करने को इंगित करता है। इस दिन बहिनें भाई की उन्नति व दीर्घायु के लिए सत्यनारायण का व्रत रखकर चंद्र–दर्शन के साथ, गाय के कच्चे दूध का अर्घ देकर व्रत खोलती है। वर्षा ऋतु में इस त्योहार के आने के कारण कई बार बादलों की वजह से देर रात्रि तक चांद नहीं दिखता। ऐसे समय में वे चंद्रमा के दर्शनों के लिए वर्षा रोकने– हेतु अनेक गीतों से उसे रिझाने का प्रयास करती है। उदाहरणार्थ –

मींह ऐ मींह ,दया करी मींह
किंथें लिकियलु आहिं
चडुं गोल्हे दर्शन दियारी
पो भली प्यो वहुं
अरे मींह डे मींह, दया करी मींह

अर्थात–'बरसात! तुम कहॉ छुपी हो? हमें चंद्रमा के दर्शन करा दो! उसके बाद भले ही तुम बरसती रहो! बरखा री बरखा, दया करो बरखा!'

बड़े–बुजुर्गों का कहना है– ''इन गीतों का इतना प्रभाव होता है कि चाहे कितनी ही घने बादल क्यों ना छाए हो, उस दिन चंद्रदेव देर–सबेर एक बार दर्शन अवश्य देते हैं।'' यह कथन इन लोकगीतों की गहराई व महत्व को स्पष्ट करता है।

सिंधु समाज में तीज :

राखी के पश्चात इस समाज में तीज मनाई जाती है। इस त्योहार पर सिंधी–समाज की सुहागिन महिलाएं पति की दीर्घायु की कामना के साथ व्रत रखती है। इस दिन महिलाएं प्रातः ही शुभ बेला में स्नान आदि कर निराहार निर्जल व्रत रखती है और शायद गोधूलि बेला के समय गुरु महाराज (पारिवारिक पंडित) के यहां जाकर 'लोक–कथा' (सात भाइयों की एक बहन..) सुनने के पश्चात झूला झूलती हुई गीत गाती है–

हर झूले सॉ मेहंदी हाथों से लगाए,
मॉ पुजियॉ सुहाग सॉ,
हर झूले सॉ, मेहंदी हाथों से लगाए३.

अर्थात– 'हर सावन में हाथों पर मेहॅदी सजा, मैं हर झूले में सुहाग के संग पूजा करूं।
जोगी पेहिंजे जो सा, भोगी पेहिंजे भोग सा, राणि पेहिंजे राज सा, मॉ पेंहिंजे सुहाग सा। हे तिज मॉ, नीत–नीत मुखे, झूले में झूलाए३.
अर्थात– 'हे तिज मॉ! जोगी अपने जोग के साथ, भोगी अपने भोग के साथ, रानी अपनी राजा के साथ और मैं अपने सुहाग के साथ हर सावन के झूले में झूलूॅ, मुझे ऐसा आशीर्वाद दे!'

दरअसल, सावन माह में आने वाली परंपराओं, तीज–त्योहारों को मनाने के पीछे मान्यता यह है कि सावन के माह में आने वाले व्रतों को रखने वाली महिलाओं में, समस्त समस्याओं से बहादुरी के साथ जूझते हुए सफलता हासिल करने की शक्ति जागृत होती है।

सिंधु समाज में दशहरा पर्व :

सिंध का इतिहास जानने पर हमें ज्ञात होता है कि सिंधु समाज मुख्यतः 'लुहाना जाति' से संबंधित है। लुहाना जाति के जन्म का संबंध भगवान राम से है। चूंकि लुहाना जाती भगवान राम के पुत्र 'लव' से उत्पन्न ना मानी गई है, अतः संपूर्ण सिंधू–समाज के लोग भगवान राम के वंशज मान, स्वयं में सम्मान–सूचक संबोधन 'राम–राम' से ही मिला करते हैं। इस तिथि को विशेष सभी शुभ कार्यों के लिए 'अबूझ मुहूर्त' के रूप में माना गया है।

संतान के जन्म के छठे दिन, तेरहवें महीने या फिर दशहरे के अवसर पर 'मुंडन संस्कार' पूर्ण करने की परिपाटी है। सिंधु समाज के मुंडन संस्कार किसी उत्सव से कम नहीं, आतः प्राचीन समय में इस पुनीत कार्य के लिए 'खेजड़ी वृक्ष' के तले एक विशाल मेला–सा लग जाया करता था। सिंध के अलग–अलग क्षेत्रों के लोगों के लिए किसी एक पेड़दृखेजड़ीदृका निर्धारण कर दिया जाता था, जहां सामूहिक रूप से मुंडन संस्कार पूर्ण किया जाता था। इस अवसर पर महिलाएं डांडिया नृत्य करती हुई जो गीत गाती है, वह इस प्रकार है–

मुन्नड जे वेल ते, मां ठरई ंआहिया
देव वाधायूं दीन्दो, मुन्नड जे वेल ते
राम अशीष दीन्दो, वर्धनदो वीक्षिन्दो
मुन्नाड जे वेल ते३.

अर्थात– 'मुंडन के अवसर पर मां प्रसन्न है। राम आशीष देंगे। बड़ा होकर यह प्रगति करेगा। मुंडन के अवसर पर मैं प्रसन्न हूं।'

सिंधु समाज में दीपावली :

रोशनी, दीपमालाओं एवं आतिशबाजी का जगमग त्यौहार 'दीपावली' अपने देश भारत में ही नहीं अपितु विश्व के कई मुल्कों में बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। इस महापर्व पर गुयाना में रंग–बिरंगे गुब्बारे उड़ाए जाते हैं तो थाईलैंड में दीपक को केले के पत्तों पर रखकर नदियों में प्रवाहित करने की परंपरा है। ट्रिनिडाड में लक्ष्मी–जैसी ही धन की देवी 'विरयू मां' की सोने–चांदी व गुलाब के फूलों से पूजा–अर्चना की जाती है।

जिस प्रकार अन्य देशों में इस पर्व को विभिन्न प्रकार से मनाए जाने का रिवाज है, उसी प्रकार हमारे देश में भी इसे हर जाति, संप्रदाय व समाज में एकरूपता होते हुए भी अलग–अलग तरह से मनाए जाने की सदियों पुरानी परंपरा है।

भारत में जिस प्रकार होली के दिन 'होलीका' और मकर संक्रांति के पूर्व 'लोहडी' जलाने की परंपरा है, ठीक उसी प्रकार सिंधु–समाज में दीपावली के दिन 'मिलूंडा' जलाने का रिवाज है। इसमें हर परिवार का पुरुष मुखिया अपने परिवार के पुरुष सदस्यों के साथ सरकंडे पर कपड़ा बांध उसे सरसों के तेल से जलाता है। फिर उसी सरकंडे से सभी सदस्य एक दूसरे के सरकंडे को जलाते हुए और उस जलती हुई आग पर कच्चे चावलों को डालते हुए सामूहिक स्वर में गाते हैं–

दीयारिय जो दियो वरियो

नदो वदो चिभुड़ मिठो

अर्थात– 'दिवाली का दीपक जला, छोटा–बड़ा कचरा मीठा!' और, ऐसा गाते हुए सभी सदस्य एक साथ उन सर कंडो को जमीन पर रख देते हैं।

प्रतीक समाज की भांति सिंधु समाज के लोग भी लक्ष्मी गणेश पूजन करते हैं यह गाते हुए–

दियारी माता भली करे आई
दियारी माता भली करे आई

अर्थात– 'दिवाली माता सब का भला करने, सभी का हित करने आ गई है।'

सिंधु–समाज में पूजा के समय थाली अथवा कटोरी कच्चे दूध में शुद्ध सिंदूर तथा सोने व चांदी के सिक्के डाल, लक्ष्मी व गणेश के दरबार की पूजा–अर्चना की जाती है। पूजा के उपरांत उन सिक्कों को परिवार का हर सदस्य अपने दांतों, आंखों पर पूरे शरीर से छुआ कर वापस यथास्थान रख देता है इसके पश्चात भगवान को भोग लगाकर प्रसाद ग्रहण किया जाता है।

दीपावली की प्रातः चार बजे परिवार की बड़ी– बूढ़ी वृद्धा घर के समस्त दरवाजे खोलकर और चांदनी में दीपक रखकर पूरे घर का चक्कर काटती है फिर दीपक को पूजा स्थल पर रखते हुए वह गुनगुनाती है।

दिवारी आई दालट वई
दियारी आई दालट वई

अर्थात– 'दिवाली आई, कष्ट गएय दीपावली आई, संकट गये!'

सिंधु–समाज में तीन दिन (धनतेरस, छोटी दिवाली, दीपावली) तक उसकी विशेष पूजा वाले दीपक को जलाने के प्रचलन के साथ तीसरे दिन कच्चे दूध में डाले गए सोने–चांदी के सिक्कों को निकालकर बाकी अनावश्यक सामग्री किसी दरिया में डालकर, दिवाली को एक साल तक के लिए विदा कर, इस समुदाय में फिर नए सिरे से कड़े परिश्रम में डूब जाने का चलन है। हर वर्ष सिंधु–समाज में इसी प्रकार से दीपावली मनाने की प्राचीन परंपरा है, जो शनैः शनैः शिथिल पड़तीं जा रही है।

सिंधु समाज में शक्ति पूजा :

ऋषि–मुनियों, साधु–संतों, वैरागी महात्माओं आदि के इस देश में प्राचीन काल से ही शक्ति पूजन की परंपरा रही है। महान शक्ति की द्योतक मां दुर्गा को प्रतिवर्ष नवरात्रों में कश्मीर से कन्याकुमारी और कच्छ से नागालैंड तक देश के सभी भागों में भिन्न–भिन्न तरीकों से पूजा जाता है।

दुर्गा पूजा में प्रायः सर्वत्र रात्रि जागरण (जगराता) एवं भक्ति में गीत संगीत से भक्ति जन आत्मविभोर होकर झूम उठते हैं हिंदू समाज भी इससे अछूता नहीं है।

सिंधु समाज में मकर संक्रांति :

प्रतिवर्ष 14 फरवरी को (मकर–संक्रांति के दिन) विशेषतः पश्चिम भारत के कोने–कोने में पतंगे उड़ाई जाती है। इस दिन तिलों से मिश्रित लड्डू, तिलपट्टी आदि का सेवन भी किया जाता है। भारत देश से जुदा हुए एक हिस्सेदृ सिंध प्रदेश (जो वर्तमान में पाकिस्तान में है) में रहने वाले सिंधु–समुदाय के लोगों द्वारा मकर–संक्रांति मनाने का रिवाज बिल्कुल भिन्नता लिए हुए हैं।

मकर–संक्रांति आने से एक दिन पूर्व शासनकाल में सिंधु–समाज की विवाहित महिलाएं चौक या सार्वजनिक मैदानों, स्थलों आदि में एकत्र हो सामूहिक रूप से नृत्य के साथ गीत–संगीत का आयोजन करती है।
यथा –

सिजु इन्दो उत्तर खां,न दिजन्दो मेहनत खां, मुढियो खाई ईलन्दो, दियो दिहु वधन्दो३..

अर्थात– 'सूर्य उभरेगा उत्तर से, न डरेगा मेहनत से, लड्डू खाकर चलेगा और दिनों–दिन बढ़ेगा।' तात्पर्यदृ यह कि मौसम में परिवर्तन होने के साथ–साथ सभी ऊर्जावान होते जाएंगे।

इसके अतिरिक्त सांझ ढलने पर बहुओं के द्वारा प्रस्तुत नृत्य एक विशेष आकर्षण होता है, जिसका प्रारंभ कोई वृद्ध महिला थाली बजाकर करती है। ताली बजाते ही समस्त महिलाएं ताली बजाती हुई इस गीत को गाती है–

उत्ताणु उतारियो, अधु सियारों कुतरियों
पोरीहय खा ना मुकरियो, उत्राणु उत्तरियों३..

अर्थात– 'संक्रांति जाने के साथ–साथ आधी सदियों कट गई है। अब परिश्रम से ना मुकरना!' इस प्रकार संगीतमय वातावरण में दी जाने वाली प्रेरणा से भी सकारात्मक कर्म में जुट जाने के लिए लालायित हो उठते हैं।

सिंधु समाज में होली :

वसंत ऋतु की पंचमी के पश्चात सिंधु–समाज में होली की तैयारियां फाल्गुन महीने की चांदनी रातें प्रारंभ होते ही शुरु हो जाया करती है। विवाहित और अविवाहित महिलाएं इस माह की पहली चांदनी रात से ही सार्वजनिक स्थलों पर एकत्र हो लोक नृत्य आदि के साथ पारंपरिक गीत गाया करती है। इस समय एक विशेष गीत, जिसे 'सहारा' कहा जाता है गाने का प्रचलन है।

होली से एक दिन पूर्व 'होलिका' जलाई जाती है। इस अवसर पर सभी महिलाएं जलती धोनी में कच्चे बेल अथवा ज्वार के दाने अर्पित करते हुए यह गीत गाती है–

होलिका माता
कजाई कुल जो खैर
टिन वर्णन जो खैर
हिंदू–मुस्लिमाननी जो खैर
देस परदेस रक्षा कजाई
सभनिनि खे बधाईजा– बुझाईजा

अर्थात– 'होलिका माता! तीनों वर्णों का भला करना, हिंदू–मुसलमानों का भला करना, देस– परदेस में रहने वाले सभी की रक्षा करना, सभी को सुख–समृद्धि प्रदान करना।

इस प्रकार गीत गाती हुई महिलाएं धनी (अग्नि–होलिका) के चारों ओर सात फेरे लगा, क्षमा–याचना व दंडवत प्रणाम करती है। इसके अगले दिन धूमधाम से रंगों का त्योहार 'होली' मनाया जाता है।

निष्कर्ष :

बदलते परिवेश के साथ भले ही हमारी परंपराओं में परिवर्तन आया है, परंतु संगीत की सत्ता उनमें आज भी सदा की भांति ही विद्यमान है। इससे स्पष्ट होता है कि संगीत संसार के कण–कण में है, फिर चाहे संदर्भ रस्मों–रिवाजों का हो या तीज–त्योहारों का संगीत वस्तुतः चिरस्थायी है, शाश्वत है।

संदर्भ सूची :

१) डॉ कन्हैया अगनानी : 'सिंधु दिण–वार' (सिंधु तीज–त्यौहार)
२) डॉ कन्हैया अगनानी : ' सिंधु–समाज में प्राचीन तीज–त्योहार'
३) डॉ अनिता जगनानी : ' भारतीय संगीत को सिंधु समाज का योगदान'
४) Choksey, R.D. and Shastri, K.S., The Story of Sind, Dastane Ramchandra & Co., Pune, 1983
५) Ajwani, L.H. History of Sindhi Literature, Sahitya Akadami, New Delhi, 1970.
६) Dauodpote, U.M., "Survey of Sindhi Literature", Sind People and Progress, Director of Information, Karachi, August, 1954.
७) Hiranandani, Popati, History of Sindhi Literature, 1947-1978, Anuradha Publication, Bombay, 1984.